षष्ठ अध्याय

"उपसंहार"

षष्टम अध्याय

''उपसंहार''

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध का हिंदी उपन्यास में चित्रित दलित जीवन विषय रहा है। आज के आधुनिक युग में संपूर्ण विश्व के साथ-साथ विश्व की सभी साहित्यिक, विधाओं का स्तर काफी विकसित हो रहा है। मानवी जीवन और समाज जीवन के हर एक अंग का चित्रण साहित्य में हो रहा है। साहित्य का मानव तथा समाज का अटूट संबंध रहा है। साहित्य समाज की देन है। समाज जीवन में होनेवाले परिवर्तन से साहित्य भी प्रभावित हो रहा है। यही प्रवृत्ति उपन्यास विधा में भी दिखायी देती है। जिस प्रकार 'साहित्य को समाज का दर्पण' कहा जाता है, उसी प्रकार उपन्यास को 'मानवी जीवन का महाकाव्य' माना जाता है। मानवी जीवन और समाज जीवन में होनेवाले परिवर्तन, संकलन, नये मूल्यों का संबंध की स्थापना आदि सभी बातों का उपन्यास में यथार्थ रूप में चित्रण करने का कार्य उपन्यासकार कर रहे हैं। इसी कारण स्वातंत्र्योत्तर काल में ज्ञान देनेवाला, समाजजीवन का अंकन करनेवाला, मानवी मन को प्रेरणा देनेवाला, सोचने के लिए विवश करनेवाला उपन्यास आज शोषित, पीड़ित, उपेक्षित, मानवी जीवन की आवाज बना है। दलित, आदिवासी, विधवा नारी, वेश्या आदि के जीवन की व्यथा प्रस्तुत करने का कार्य साहित्य के माध्यम से हुआ है।

हिंदी उपन्यासों में प्रेमचंदजी का एक नया रूप देखने को मिलता, जिससे प्रेमचंद युग से साहित्य के क्षेत्र में देखा जाता है। इन्होंने हिंदी उपन्यास विधा को एक नयी दिशा और नयी गति देने का कार्य किया है। उन्हीं के समान निराला, भगवतीचरण वर्मा, मदन दीक्षित, नागार्जुन, जगदीशचंद्र, मधुकर सिंह, शिवप्रतापसिंह आदि जैसे अनेक रचनाकारों ने अपनी साहित्य कृतियों में चेतना, विद्रोह और जागृति निर्माण करने का कार्य साहित्यकारों ने किया है। इसी कारण हिंदी साहित्यकारों की सामाजिक प्रतिबध्दता यहाँ दिखायी देती है।

हिंदी की तरह मराठी साहित्य में दलित साहित्य एक स्वतंत्र और विकसित विधा है। आज हिंदी साहित्य में भी दलितो के हर एक क्षेत्र पर प्रकाश डालते हुए उनका लेखन कार्य किया जा रहा है। उपन्यास, कहानी, नाटक, कविता, आत्मकथा, संस्मरण, जीवनी आदि साहित्य की अनेक विधाओं में दलित जीवन के चित्रण दिखायी देते है। सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव साहित्यपर हो जाता है जिससे दलित साहित्य प्रभावित रहता है। अनेक समाज सुधारकों के प्रयत्नों के कारण दलित समाज जागृत हो उठा। उनमें क्रांति की भावना पैदा होने लगी और वहीं दलित अपने अधिकार और अपने हक्को के लिए विगत समाज से लढने के लिए प्रेरित हो उठा। उनमें नई चेतना, नई विचारधारा और नविन मूल्यों का निर्माण हुआ। ऐसी परिवर्तित होनेवाली दलितों की स्थिति को साहित्यकारों ने अपनी रचना में चित्रित कर लिया है। डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकरजी के 'शिक्षित बनो, संगठित बनो, संघर्ष करो' इस नारे से सोई हुई दलित जनता भी जाग उठी उनमें संगठन की शक्ति का निर्माण होने लगा। सभी समाज शिक्षा के महत्व को

समझने लगा और ऐसी स्थिति में वह हर तरह के संघर्ष के लिए पूर्ण रूप से तैयार होने लगा। डॉ. अम्बेडकर, महात्मा गांधी, शाहू, म. फुले आदि समाज सुधारकों ने इस दलित समाज में नवचेतना जगाने का और लोगों को संगठन का महत्व समझाया। साहित्यकारों ने इसे अलग रूप से स्पष्ट किया।

आज का आधुनिक युगीन साहित्य दलित चेतना को ज्यादा महत्व प्रदान करता है। स्वतंत्रता के पश्चात सरकार की विकास नीति के अनुसार देश की आर्थिक व्यवस्था का स्तर उँचा हो इस दृष्टि से छोटे-बडे कारखानों, कंपनियों और अन्य समाजसेवी संस्थाओं की निर्मिती की गयी। लेकिन ऐसी सुधारणों के साथ-साथ, सरकार ने यह बात भी स्वीकार कि जब तक देश की इस बहुसंख्य में रहनेवाली दलित जाति का विकास नहीं हो सकता तब तक देश तरक्की नहीं हो सकती। इनके लिए सरकार ने इन दलितों का भी जीवन स्तर उठाने के उद्देश्य को सामने रखकर अनिवार्य और मुफ्त शिक्षा नीति शुरू की जिसके कारण दलित और पिछडा समझनेवाला यह समाज शिक्षित बना। इससे धीरे-धीरे सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन आने लगा। यह समाज भी संगठित होकर अपने हक्कों को लेकर सरकार के साथ हक्क की लडाई लडने के लिए तैयार हो गया।

स्वातंत्र्योत्तर काल में लोकजीवन, लोकसंस्कृति को सबसे ज्यादा महत्व देकर उसी को अपने उपन्यास का विषय बनाया गया। प्राचीन काल से लेकर इन दलित समझनेवाली दलित पीढी को कितने अत्याचार और अन्याय का सामना करना पडा है। यह समाज शुरू से ही सरकारी योजनाओं की दृष्टि से उपेक्षित ही रहा है। इस समाज की तरफ किसी का भी ध्यान नहीं गया था। लेकिन इस तरह की हर मुश्किलों का सामाना करते हुए भी इन दलितों ने अपनी जाति को जीवित रखा। लेकिन बाद में इनके दलितोध्दार, दलित जागरण, दलित मुक्ति, आरक्षण, सामाजिक न्याय, सामाजिक समानता, दलित संगठन आदि के रूप में कार्य शुरू हुआ। समाज जीवन में आनेवाला यह बदलाव साहित्यकारों की दृष्टि से दूर नहीं रहा। उन्होंने इसे अपनी नजर में बंद करके साहित्य के माध्यम से एक नयी वाणी प्रदान की।

समाज जीवन की नयी व्याख्या प्रस्तुत करने का कार्य इस साहित्य ने किया। भारतीय समाज व्यवस्था का एक अत्यावश्यक अंग दलित है। मनुष्य होने के नाते जिन लोगों का जीने का हक छीन लिया है, जिसे दबाया गया है, अपने पैरों तले कुचला या रौंदा गया है उसे दलित के नाम से जाना जाता है। लेकिन आज का दलित अपने ऊपर होनेवाले अत्याचार को सहने की शक्ति नहीं रखता बल्कि वह भी इस अत्याचार का बदला विद्रोह के रूप दे रहा है। आज आदिवासी, वनवासी, अनुसूचित जाति, जनजाति को दलित कहा जाता है। स्वातंत्र्योत्तर काल में दलित शब्द व्यापक बना है। साहित्यकारों ने भी इस 'दलित' शब्द की व्याख्या अलग-अलग रूप से प्रकट की है। इसी कारण दलित विशिष्ट जाति नहीं बल्कि, सर्वहारा, शोषित, उपेक्षित को 'दलित' माना जाता है। जिस साहित्य में ऐसे उपेक्षित समुह का, सर्वहारा वर्ग का चित्रण हुआ उसे 'दलित साहित्य' कहा जाता है। संत साहित्य और समाजसुधारकों के कारण इन दलितों का स्तर उँचा हो गया और भारतीय समाज जीवन में परिवर्तन हुआ। इस परिवर्तन ने दलित साहित्य का बल

दिया। बदली हुई राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, परिस्थितियों का भी दलितों के जीवन पर परिणाम हुआ। शिक्षा, नौकरी, स्वास्थ्य, भौतिक सुविधा आदि सभी क्षेत्रों में दलितों ने प्रवेश कर लिया। उन्होंने ने अपनी अपनी जाति का संगठन तैयार किया।

दलितों का संगठन, दलित नारी का जीवन, उनमें उत्पन्न होनेवाली चेतना आदि का भी चित्रण यहाँ हुआ है। जिससे स्पष्ट है कि दलित साहित्य सामाजिक क्रांति का संदेश देनेवाला रहा है। आजादी के बाद एक तरफ दलित जीवन विकसित हो रहा है तो दूसरी ओर उनके जीवन में नई कठिनाईयाँ, मुश्किलें देखने को मिलती हैं। उनकी मानसिकता, उनका अज्ञान, उनके मन में पलनेवाले अंधविश्वास, गरीबी और राजनीति तथा उच्च कुल से संबंध रखनेवाले व्यक्तियों की ईच्छा या बर्ताव आदि के कारण इन दलितों का विकास नहीं हो रहा है। इन्हीं के कारण सरकार की योजनाओं से यह समाज उपेक्षित रहा है। यह सच है कि जब दलित समाज संगठित होकर अपना विकास स्वयं करेगा तभी दलित जाति का समाज का विकास हो जाएगा। यहाँ यह बात स्पष्ट है कि जो सपना दलितों ने संजोगकर रखा है उसे पुरा कराने के लिए उन्हें शिक्षा और संगठन का सहारा लेना पडेगा नहीं तो उनका यह सपना मात्र सपना ही बनकर रह जायेगा।

हिंदी उपन्यासकारों ने भी दलित जीवन को अपनी रचना का विषय बना लिया है। 'जंगल के आसपास', में राकेश वत्सजी ने आदिवासी, हरिजन, चमार, बंगालन का, शिवप्रतापसिंहजी ने 'शैलूष' में हरिजन, चमार, मुसलमान, बनाकर, भर, गोंड, कंदरावासी, गिरिजन का, 'नरककुंड में बास' में जगदीशचंद्रजी ने चमार, मुसलमान, हरिजन का और गिरिराज किशोरजी ने 'परिशिष्ट' में चमार, महार, आदि दलित जातियों का जीवन चित्रण किया है।

आलोच्य उपन्यासों में उपन्यासकारों ने पहाडी इलाके के दमकडी, पहरूआ, कमालपुर, गाँव और शहर जालंधर, दिल्ली आदि प्रदेशों में स्थित दलित जीवन, उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक परिस्थिति, उनकी जातीय पंचायत, शिक्षा प्रसार के कारण उनमें होनेवाला निरंतर परिवर्तन आदि का चित्रण किया है। अन्याय के खिलाफ संघर्ष करनेवाले दिनेश, सावित्री चाची, अनुकूल तथा काली आदि पात्र प्रगतिवादी चेतना के प्रतीक है। इसके साथ ही भविष्य में भारतीय जो समाजव्यवस्था है उसमें होनेवाला परिवर्तन आलोच्य उपन्यासकारों ने चित्रित किया है। जिससे साहित्यकारों को भविष्य का सृष्टा समझा जाता है।

1980 में प्रकाशित 'जंगल के आसपास' की कथावस्तु और 'नरककुंड में बास' 1994 में प्रकाशित इस उपन्यास की कथावस्तू में निरंतर परिवर्तन होता हुआ दिखायी देता है। 1980 में प्रकाशित 'जंगल के आसपास' में आदिवासी लोगों का रहन-सहन, उनके रीति-रिवाज, उनके मन में पनपने वाली अंधश्रध्दा, छुआछूत की भावना आदि समस्याओं की अपेक्षा में, 1994 में प्रकाशित 'नरककुंड में बास' में नगर, महानगर में रहनेवाला शिक्षित,

विकसित तथा विकासात्मक प्रगति की दृष्टि रखनेवाला दलित जीवन रहा है। यह कालानुरूप होनेवाला परिवर्तन हिंदी उपन्यासों का विषय रहा है। उपन्यास में लेखकों ने परिवर्तित होनेवाले हर बात पर सोचा है। चाहे वह शिक्षा हो, समाजसुधार हो या दलितों में उत्पन्न होनेवाली नवीन विचारधारा हो। उन्होंने इन सभी घटकों को अपने उपन्यास में स्थान दिया है। खास तौर पर 1980 के बाद में जो समाज परिवर्तन हुआ जो दलितों के विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण साबित हुआ है। इसके साथ-साथ शिक्षित दलित चेतना विकास कैसे करता है, इसका ब्योरा 'परिशिष्ट'उपन्यास में बावनराम और अनुकूल देते है।

हिंदी उपन्यासकारों ने दलित जीवन का चित्रण करते समय उनमें स्थिति अंधविश्वास, उनके तीज-त्यौहार, उत्सव-पर्व-रूढ़ि-परंपरा, उनके संस्कार, उनमें स्थिति बलि-प्रथा, जातीय भेदाभेद, उनका संगठन या समुह भावना, नारी स्थिति, लोककथा एवं लोकगीत आदि विविध अंगों का विस्तृत चित्रण किया है । साथ ही इन दलितों में धीरे-धीरे निरंतर गति से होनेवाला समाज परिवर्तन को भी नजर अंदाज नहीं किया है। जिससे उन्हें इस बात का पता चलता है कि उन दलितों में अज्ञान, अशिक्षा और अंधविश्वास की मात्रा अधिक जो उन्हें आगे बढने से रोक रही है। अंधविश्वास के कारण उनका शोषण हो रहा है। इसलिए सामुहिकता और सामाजिक एकता दिखाने वाले उत्सव का चित्रण करके हिंदी उपन्यास कारों ने सामाजिक एकता पर बल दिया है। 'जंगल के आसपास' का 'करियाला' उत्सव इसका उत्तम उदाहरण है।

प्रस्तुत आलोच्य उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन, उनका शोषण तथा उनकी उपेक्षितता की मात्रा अधिक देखने को मिलती है। 'जंगल के आसपास', 'शैलूष', 'नरककुंड में बास' आदि उपन्यास इसका प्रमाण है, तो सरकारी नौकरी, उच्च शिक्षा, आरक्षण, सरकारी सहायता के बल पर परिवर्तित प्रगत दलित जीवन का भी चित्रण हुआ है। 'परिशिष्ट' की कथावस्तू इसका उदाहरण है। अनुकूल और बावनराम इसे दर्शाते है। नीलम्मा भी इसमें अपने लिए जगह बनाते हुए पीएच्.डी. जैसी उच्च शिक्षा को ग्रहण कर रही है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में दलित जीवन में सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ राजनीतिक चेतना का भी निर्माण हो रहा है। दलितों में से ही राजनीतिक नेतृत्व उभरकर सामने आने लगा है। आजादी के आंदोलन में राजनीतिक आजादी के साथ-साथ सामाजिक समता की भी मांग थी। परिणामत: आजादी के आंदोलन के बाद में दलित समाज सक्रिय रहा। डॉ.अम्बेडकर, जैसे नेताओं ने दलित समाज को संगठित करके सक्रिय बनाया। परिणामत: दलित समाज राजनीति में सक्रिय हुआ। दलित चेतना की यही निशानी है। आलोच्य उपन्यासों में भी इसके दर्शन होते है। 'जंगल के आसपास' में आदिवासीयों के लिए काम करनेवाला दिनेश आदमखोरों से लढ़ने के लिए दमकडी गाँव में संगठन बनाता है। 'परिशिष्ट' में अनुकूल उच्च शिक्षा ग्रहण करने शहर जाता है। बावनराम उच्च शिक्षा के बारे में अपने विचार भी उच्च कोटि के है। जिससे दलितों में आनेवाले परिवर्तन को यह सारी घटनाएँ दर्शाती है। 'शैलूष' की

सावित्री चाची नटों को संगठित करके चालीस एकड भूमि की प्राप्ति के लिए युवाओं को उत्तेजित करती है, लड़ने की शिक्षा देती है। नारी को संगठित करके अन्याय का मुकाबला कराने की सलाह देती है। परिवर्तित समाज जीवन, दलित जीवन को दर्शाया है। आज के भारतीय समाज व्यवस्था से जातीयता नष्ट हो रही है। और सामाजिक एकता का कार्य शुरू हुआ है।

दलित जीवन का चित्रण करनेवाले साहित्यकारों ने दलित जीवन की झाँकिया प्रस्तुत की है। उनके तीज-त्यौहार उत्सव मनाने के तौर तरिके, मंदिर प्रवेश न देना, उनकी बस्ती या कबीले गांव से बाहर रखना, आदि जैसी घटनाओं का चित्रण हुआ है। साहित्यकारों ने इस शोषित जीवन के साथ-साथ उनमें उत्पन्न चेतना को भी दर्शाया है। दलितों के लिए नवीन रूप से 'करियाला' उत्सव को मनाना, शिक्षा का प्रसार करना, उनमें संगठन का निर्माण होता आदि कई घटनाएँ जो दलितों में उत्पन्न चेतना को दर्शाती ही साथ ही इसी चेतना को नया रूप देने का कार्य अनुकूल 'परिशिष्ट' में करता है। दलितों की समस्याएँ पर भी साहित्यकारों ने गौर किया है। क्योंकि वही समस्याएँ दलितों के विकास के अडसर है। दलितों में अंधविश्वास अधिक रहता है वे ज्यादा शकुन-अपशकुन पर विश्वास रहता है। यह लोग दवा की अपेक्षा दवापर निर्भर रहते है। अशिक्षा के कारण जमींदार, पुलिस और राजनीतिक तथा धार्मिक व्यक्ति दलितों के साथ अमानवीय व्यवहार कर रहे हैं। परिणामत: उनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शोषण हो रहा है। आज यही दलित समाज संगठन का आधार लेता हुआ अपने अधिकारों के लिए लढ़ रहा है। वह इस शोषण से मुक्ति पा रहा है।

आज दलितों में जातीय भेदाभेद, भ्रष्टाचार, अशिक्षा, नारी दृष्टि, धर्म परिवर्तन की समस्या, नशापान की समस्या, आदि समस्याएँ दिखाई देती है। सरकार की उदार एवं विकास की ओर बढनेवाली नीति, नविनतम समाजववादी समाज रचना की स्थापना, समाजसेवी संस्थाओं का निर्माण इसके साथ ही साथ समाजसुधारकों का कार्य आदि के कारणों से दलितों की यह जो समस्याएँ है वह हल हो सकती है। सन 1980 के बाद धर्म परिवर्तन एक नयी समस्या के रूप में उभर रही है।

आजादी के बाद सामाजिक परिवर्तन और राजनीतिक चेतना के कारण दलित जीवन परिवर्तित होने लगा। आजादी का आंदोलन, संत साहित्य का प्रभाव और समाज सुधारकों के कार्य के कारण दलित जनजागरण और दलितोध्दार एक राष्ट्रीय कर्म बना। कार्ल मार्क्स के नये विचारों के परिणामस्वरूप नवीन समाज रचना निर्माण हुआ। पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव नवजागरण काल, प्रसारमाध्यमों का योगदान, प्रगतिवादी विचारों का प्रभाव आदि के कारण दलित समाज चेतित एवं विद्रोही बना। दलित चेतना, राष्ट्रहित और जनहित के लिए कल्याणकारी है। आलोच्य उपन्यासों में नये व्यवसाय करनेवाले, जाति-प्रथा को ठुकराने वाले, जमींदारों की मनमानी का मुकाबला करनेवाले दलित दिखाई देते है। शिक्षा प्रसार के केंद्र नयी-नयी पाठशालाओं का निर्माण करनेवाले दलित दिखाई देते

है। 'जंगल के आसपास', में दिनेश, 'शैलूष' में सावित्री चाची, 'नरककुंड में बास' में काली और 'परिशिष्ट' में अनुकूल आदि उसके प्रतीक है। यह पात्र दलितों का संगठन करके सामाजिक एकता स्थापित करने का कार्य कर रहे है। बदलती सामाजिकता, व्यवस्था का प्रतिनिधि साहित्य 'दलित साहित्य' है। इस साहित्य में मिशनरी प्रवृत्ति पर भी प्रकाश डाला है। सामाजिक रूपता, सामाजिक क्रांति एवं सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में हिंदी साहित्यकारों ने अपना योगदान दे दिया है। दलितों में उत्पन्न चेतना, नई विचारधारा का आविष्कार नई समाज व्यवस्था इसी का प्रतीक है।

अत: स्पष्ट है कि आलोच्य उपन्यासों में दलित साहित्य, दलित जीवन, उनकी स्थिति, उनकी समस्या, उनका होनेवाला शोषण, उनका सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन, उनकी चेतना आदि का यथार्थ चित्रण किया है। आलोच्य उपन्यासकारों ने अपनी रचनाओं में प्रगतिवादी और अम्बेडकरी विचारों को वाहक पात्र चित्रित करके सामाजिक क्रांति को नयी दिशा देने का राष्ट्रीय कार्य किया है। सामाजिक क्रांति और सामाजिक परिवर्तन और समाज में आनेवाले बदलाव को उपन्यासकारों ने चित्रित किया है। आलोच्य उपन्यासों में दलित जीवन की झाँकी दिखायी देती है।

---x---